Mizoram University Journal of Humanities & Social Sciences
(A National Refereed Bi-Annual Journal) Vol III Issue 2, December 2017 ISSN: 2395-7352

'लाल पसीना': भारतीय गिरमिटिया मजदूरों की संघर्ष गाथा

कु. आराधना शुक्ल *
प्रो. संजय कुमार **

शोध-पत्र सार

मॉरिशस में जन्में हिंदी के प्रतिष्ठित कथाकार अभिमन्यु अनत ने व्यापक मात्रा में हिंदी भाषा में साहित्य-सृजन किया है। अनत जी ने अपने देश मॉरिशस के समाज व समय की विभिन्न समस्याओं को अपने उपन्यासों में अभिव्यक्त किया है। इन्होंने लगभग 32 उपन्यास लिखे हैं। 'लाल पसीना', 'गाँधी जी बोले थे', 'और पसीना बहता रहा' उपन्यास आप्रवासी जीवन से सम्बन्धित हैं। मॉरिशस में यूरोपीय गोरे लोगों द्वारा काले भारतीय गिरमिटिया मजदूरों का अन्तहीन शोषण लगभग 140 सालों तक किया गया। अभिमन्यु अनत का 'लाल पसीना' उपन्यास इन्हीं भारतीय गिरमिटिया मजदूरों के कारुणिक इतिहास को प्रस्तुत करने वाला अत्यन्त महत्वपूर्ण दस्तावेज है।

बीज शब्द: ब्रिटिश साम्राज्यवाद, शर्तबन्द प्रथा, गिरमिटिया मजदूर, अरकाटी दलाल, आप्रवासी भारतीय

'हिंद महासागर का मोती' माने जाने वाले द्वीप मॉरिशस में जन्में हिंदी के प्रतिष्ठित व सर्वाधिक चर्चित कथाकारों में से एक अभिमन्यु अनत अपनी सशक्त लेखनी के माध्यम से न केवल मॉरिशस में, बल्कि मॉरिशस से इतर अन्य देशों, विशेषकर भारत में भी खासे लोकप्रिय रहे हैं। औपनिवेशिक इतिहास होने के कारण मॉरिशस में यद्यपि अँग्रेजी व फ्रेंच भाषा का बोलबाला रहा है लेकिन इसके बावजूद भी वहाँ कुछ ऐसे लेखक हुए हैं जिन्होंने अँग्रेज़ी व फ्रेंच में साहित्य-सृजन करते हुए भी हिंदी भाषा व साहित्य के प्रति गहरा लगाव दिखाया है और व्यापक मात्रा में हिंदी भाषा में साहित्य-सृजन किया है, जिनमें अभिमन्यु अनत महत्वपूर्ण हैं। बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार अभिमन्यु अनत ने अपनी सशक्त लेखनी के माध्यम से साहित्य की विभिन्न विधाओं (काव्य, कहानी, नाटक, उपन्यास, एकांकी, बाल-साहित्य व संकलन-संपादन आदि) में लेखन कार्य किया है। किन्तु जिस विधा के लिए वे सर्वाधिक चर्चित हैं, वह है उपन्यास विधा। अनत जी ने अपने देश, समाज व समय की विभिन्न समस्याओं को अपने उपन्यासों में

*कु. आराधना शुक्ल, शोध छात्रा, पीएच. डी., हिंदी विभाग, मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइज़ोल, मिज़ोरम ईमेल: shukla.aradhana2015@gmail.com
**प्रो. संजय कुमार, आचार्य, हिंदी विभाग, मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइज़ोल, मिज़ोरम ईमेल: sanjaykumarmzu@gmail.com

व्यक्त किया है। इनके उपन्यासों में विषयगत विविधता भी है। इन्होंने लगभग 32 उपन्यास लिखे हैं। 'लाल पसीना', 'गाँधी जी बोले थे', 'और पसीना बहता रहा' उपन्यास आप्रवासी जीवन से सम्बन्धित हैं तो 'हड़ताल कब होगी', 'चुन-चुन चुनाव' और 'मुड़िया पहाड़ बोल उठा' आदि उपन्यास राजनीतिक जीवन से सम्बन्धित हैं। सामाजिक समस्याओं से सम्बन्धित उपन्यासों में 'आन्दोलन', 'जम गया सूरज', 'तपती दोपहरी', 'अपनी ही तलाश', 'मार्क ट्वेन का स्वर्ग' और 'शब्दभंग' आदि के नाम लिए जा सकते हैं, तो नारी जीवन की समस्याओं को 'शेफाली', 'अपनी अपनी सीमा', 'घर लौट चलो वैशाली', 'लहरों की बेटी' और 'मेरा निर्णय' आदि उपन्यासों में दर्शाया गया है।

'लाल पसीना' अनत जी का बहुचर्चित उपन्यास है। यह उनकी अक्षयकीर्ति का आगार है तो आप्रवासी भारतीयों की त्रासद जिन्दगी के अँधेरों का जीवन्त दस्तावेज भी। "मॉरिशस की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित इस उपन्यास में उन भारतीय मजदूरों के जीवन-संघर्षों की कहानी है जिन्हें चालाक फ्रांसीसी और ब्रिटिश उपनिवेशवादी सोना मिलने के सब्जबाग दिखाकर मॉरिशस ले गये थे।"[1] यह उपन्यास दो खण्डों में विभक्त है। इसमें सन् 1850 ई. से 1900 ई. तक की घटनाओं को 'लाल पसीना' के फलक के रूप में चुना गया है। उपन्यास के प्रथम भाग का नायक किसन सिंह है, जो मजदूर होने के साथ कवि भी है। दूसरे भाग का नायक मदन सिंह है, जो किसन सिंह का पुत्र है। किसन, मदन, मीरा और विवेक अत्यन्त जीवन्त एवं ऐतिहासिक पात्र हैं, जिनसे अनत जी का प्रत्यक्ष सम्बन्ध रहा है। इस सम्बन्ध में अनत जी की टिप्पणी है- "'लाल पसीना' के सभी तो नहीं, पर किसन सिंह, मदन, मीरा और विवेक मेरे अपने पुरखों में से हैं। किसन सिंह मेरे दादा हैं तो मदन मेरे मामा।"[2]

उपन्यास का प्रारम्भ मॉरिशस द्वीप के जन्म की कहानी से हुआ है। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन व्यवस्था में मॉरिशस में अँग्रेजों का आधिपत्य भले ही रहा हो, परन्तु आर्थिक सत्ता फ्रांसीसियों के हाथ में ही रही। मॉरिशस में इन्हीं गोरे लोगों द्वारा काले भारतीय गिरमिटिया मजदूरों का अन्तहीन शोषण लगभग 140 सालों तक किया गया। यह उपन्यास भारतीय गिरमिटिया मजदूरों के कारुणिक इतिहास को प्रस्तुत करने वाला अत्यन्त महत्वपूर्ण दस्तावेज है। 'गिरमिटिया मजदूर' उन मजदूरों को कहा जाता है, जिन्हें उन्नीसवीं शती के आरम्भ में अँग्रेजों द्वारा अपनी औपनिवेशिक सत्ता को बढ़ाने और उन देशों के प्राकृतिक संसाधनों के बड़े पैमाने पर दोहन एवं लूटने हेतु कैरेबियाई देशों की ओर 'शर्तबन्द प्रथा' के आधार पर ले जाया गया। इन मजदूरों को अँग्रेज़ सरदारों, अरकाटियों और दलालों ने विभिन्न प्रकार के प्रलोभन देकर, डरा-धमकाकर व छल-कपट से भारत से सुदूर दूसरे देशों यथा- मॉरिशस, फिजी, गयाना, युगाण्डा, सूरीनाम, त्रिनिदाद, टोबैगो इत्यादि देशों की ओर समुद्री जहाज के माध्यम से कई जत्थों में ले

गए। मजदूरों के प्रवासन की यह प्रक्रिया सन् 1834 ई. से प्रारम्भ होकर सन् 1920 ई. तक जारी रही। इन मजदूरों को 3 साल या 5 साल के एग्रीमेंट के तहत ले जाया गया। अँग्रेजी के 'एग्रीमेंट' शब्द का ही बिगड़ा हुआ देशज रूप 'गिरमिटिया' कहलाया। इस प्रकार 'शर्तबन्द प्रथा' के तहत जो मजदूर भारत से दूर समुद्रपारीय देशों (मॉरिशस, फिजी, गयाना, त्रिनिदाद, टोबैगो, सूरीनाम इत्यादि) की ओर ले जाये गये, उन्हें गोरे शासकों द्वारा 'गिरमिट' या 'कुली' नाम से ही पुकारा जाने लगा। यही 'गिरमिट' मजदूर आपस में एक-दूसरे को 'गिरमिटिया भाई' या 'गिरमिटिया मजदूर' कहने लगे।[3]

मॉरिशस के सन्दर्भ में इन्हीं भारतीय गिरमिटिया मजदूरों की संघर्ष गाथा को 'लाल पसीना' उपन्यास में विस्तार से उद्घाटित किया गया है। प्रस्तुत उपन्यास में अनत जी ने भारतीय गिरमिटिया मजदूरों पर अँग्रेज़ शासकों व उनके सरदारों द्वारा ढाये जाने वाले विविधोन्मुखी जुल्मों का यथार्थपरक अंकन किया है। जो अँग्रेज़ सरदार भारतीयों को मॉरिशस में पत्थरों के नीचे सोना-ही-सोना मिलने का सब्जबाग दिखाकर ले गये थे, वही सरदार मॉरिशस में उन्हें विभिन्न प्रकार की यातनाएँ देने से भी नहीं चूकते थे। अँग्रेज़ शासक व मालगासी सरदार भारतीय मजदूरों से पत्थर तोड़ने और गन्ने की खेती जैसे कठोर श्रम वाला कार्य करवाते थे और यदि कभी कोई मजदूर काम की थकान से या धूप की तपन से बचने हेतु थोड़ी देर के लिए भी आराम करना चाहता था तो उस पर सरदारों द्वारा कोडों की बौछार या बाँस के डण्डों की बौछार की जाती थी। इतना ही नहीं यदि कोई दूसरा मजदूर उस पीटे जाने वाले मजदूर की वकालत करता या बचाव करता तो उस पर भी डण्डों की बौछार शुरू हो जाती थी। गोरे शासकों का अत्याचार सिर्फ बाँसों की बौछार या कोड़े बरसाने तक ही नहीं सीमित होता था बल्कि वे मजदूरों पर अपने पालतू कुत्ते भी छोड़ देते थे, जो मजदूरों की बोटी-बोटी कर देते थे- "बस्ती का शायद ही कोई ऐसा मजदूर था, जिसका इन कुत्तों से पाला न पड़ा हो। कइयों की बोटी-बोटी नुच जाने से बची थी।"[4] इतना ही नहीं यदि कोई मजदूर अपने ऊपर किए जाने वाले अत्याचारों के प्रति गोरों से सवाल करता तो उसको भी या तो कैद की सजा होती या उस पर अनगिनत कोडों की बौछार की जाती- "दाऊद के तीसरी बार कहने पर गौतम ने कमर झुकाई। एक हाथ से सामने के मोटे गन्ने को थामकर दूसरे हाथ से गड़ासा चलाना चाहा कि पीछे से गेंडा की चोट खाकर वह लोचिया-सा गया। उसके सम्भलते-सम्भलते गेंडा उसकी पीठ पर बती-बती हो गया। वह भूल गया था कि मार खाते समय बोलना मना है। ...उसने पूछा, "क्यों मार रहो हो मुझे?" इसके तुरन्त बाद सभी कुछ यान्त्रिक गति से हो गया था। दो और सरदार दो तरफ से आकर एकदम सामने खड़े हो गये थे। वह हिल पाता कि तभी तीनों सरदारों ने उसे दबोच लिया।

...गौतम को ईखों के ऊपर से घसीटते हुए चट्टानों के पिछवाड़े में ले जाकर पूरी ताकत के साथ ढकेल दिया गया। बेहोशी हालत में उसे जामुन के पेड़ से बाँधकर कोड़ों की मार से होश में लाने की कोशिश होती रही।

"गौतम के बाप की सजा एकदम इससे भिन्न रही। ईख से लदी गाड़ी से बैल को हटाकर उसे बैल की जगह बाँध दिया गया और चाबुक की आवाज के साथ उससे गाड़ी को आगे खिंचवाया गया। उसने गन्ने काटते समय जो गाना शुरू किया था, उसको दोहरवाते हुए उसके शब्द-शब्द पर दस-दस कोड़े लगाए गये।"[5]

प्रस्तुत उपन्यास में अनत जी ने उन भारतीय गिरमिटिया मजदूरों की त्रासद गाथा का भी वर्णन किया है जिन्हें अँग्रेज़ शासकों ने कैद में डाल रखा था। अँग्रेज़ शासकों द्वारा कैद में डाले जाने के कारणों पर प्रकाश डालते हुए उपन्यास का कैदी पात्र कुन्दन कहता है- "कोई बैल जैसा काम करने से इनकारी के कारण इधर (कैद में) आ गया था। कोई भारत लौटने की माँग करके। कोई न्याय की दुहाई करता हुआ, तो कोई बीमारी की वजह से तीन दिन नौकरी पर न पहुँच सकने के कारण। किसी की गिरफ्तारी केवल इसलिए हो गयी थी कि उसने अपने गले से नम्बर लिखे टीन के टुकड़े को निकाल फेंका था, किसी ने सरदार से मुँह लगाने की हिम्मत की थी। जिस व्यक्ति ने पहले दिन भीतर आते ही आत्महत्या कर ली थी, उसकी गिरफ्तारी इसलिए हुई थी कि सरदार की माँग पर उसने अपनी खूबसूरत पत्नी को पहली रात मालिक के घर नहीं पहुँचाया था।"[6] मजदूरों के कैद में डाले जाने के कारणों पर प्रकाश डालने के साथ-साथ लेखक ने कैदियों के साथ कैद में किए जाने वाले दुर्व्यवहारों का भी विस्तृत वर्णन किया है। या कहें कि कैद में कैदियों के निमित्त जो शारीरिक शोषण की भयावह व्यवस्था की गयी थी, उसका यथार्थपरक अंकन किया है- "तीन फीट चौड़ी और पाँच फीट ऊँची उस कोठरी में गौतम को पन्द्रह दिन रहने पड़े थे। दिन में बस एक मुट्ठी अध-उबला चावल दरार से उसके सामने फेंक दिया जाता था। पन्द्रह दिन में कभी एक पल के लिए भी उस कोठरी का दरवाजा नहीं खोला गया था। पन्द्रह वर्ष से उस कोठरी में न कभी झाड़ू फेरा गया था और न कभी वहाँ की सीली दुर्गन्ध को बिखर जाने के लिए दरवाज़े को पूरा खोला गया था। आठ दस दिन के भीतर दण्डित मजदूर या तो अपने ही मल-मूत्र की दुर्गन्ध से खुद लाश में बदलकर दुर्गन्धित हो उठता था या तो पन्द्रह दिन बाद दरवाजे के थोड़ा खुलने पर अधमरी हालत में बाहर आता था।"[7]

अनत जी ने न सिर्फ मजदूरों के कैद में आने के कारणों व उनके साथ किए गए दुर्व्यवहारों का वर्णन किया है, बल्कि इसके साथ-साथ बीमार कैदी मजदूरों के लिए जो अस्पताल

था और उस अस्पताल में कैदियों या मरीजों के लिए जो चिकित्सकीय सुविधाएँ उपलब्ध थीं, उसका यथार्थपरक अंकन किया है। मँगरू का कुन्दन से कहा गया यह कथन मजदूरों के प्रति किए गए चिकित्सकीय उपचार की पोल खोल देता है- "साले आदमी अस्पताल आते हैं अच्छा होने के लिए, यहाँ तो रोग को और भी बढ़ाने के लिए जाना पड़ता है। जहाँ लगी से पानी पिलाया जाता है। दवाई तक के लिए छिछियाय पड़ेला।"[8] अस्पताल में मरीज मजदूरों का इलाज डॉक्टर नहीं करता था बल्कि सरदारों की हाँ-में-हाँ मिलाकर डॉक्टर मरीज को अस्पताल से जाने या दवा न देने का आदेश देता था। इतना ही नहीं अस्पताल में सभी मरीजों को एक ही सफेद रंगवाली दवा दी जाती थी। साथ ही नियमित समय पर मरीजों को न तो दवा दी जाती थी और न ही भोजन। इस सन्दर्भ में कुन्दन का कथन है- "दवाई कभी खाने से पहले दी जाती थी, कभी बाद में। कभी यह कहकर बिलकुल ही नहीं दी जाती कि दवाई अभी पहुँची नहीं। सभी मरीजों को एक ही दवाई दी जाती थी वही सफेद रंगवाली। सूखे नारियल का छिलका था, वह जिससे कटोरे का काम लिया जाता। एक ही कटोरे में सभी मरीजों को पीना पड़ता था।"[9]

गोरे शासक या सरदारों द्वारा कैदियों को न सिर्फ असमय स्वादहीन मान्योक दवा दी जाती थी बल्कि इसके साथ-साथ गालियों की बौछार भी दी जाती थी। इतना ही नहीं यदि कोई कैदी सरदार से कुछ सवाल करता या खाने-पीने की चीजों में कमी दर्शाते हुए शिकायत करता तो उस कैदी को वे लोग जेल के अन्दर ही जहर देकर मौत के घाट उतार देते थे। रामदेव व रूपलाल को उनके विद्रोही स्वर के कारण ही जेल के अन्दर ही जहर दे दिया जाता है। गोरे शासकों के इन अत्याचारों का पर्दाफाश होता है कैदियों के आपसी कानाफूसी से- "कैदियों की कानाफूसी से पता चला कि कैदी दो सौ तीन(203) अपनी कोठरी में मरा पाया गया। ...रूपलाल तो सबसे तगड़ा, सबसे चंगा कैदी था। उसकी यह अकस्मात मौत? कैदियों के बीच एक बार फिर कानाफूसी हुई। कई प्रश्न उठे। कहीं रामदेव की तरह सिपाहियों ने इसे भी जहर तो नहीं दे दिया? ...ऐसा ही हुआ होगा। कई दिनों से ये लोग उसे रास्ते से हटाने की सोच रहे थे। अभी परसों उसने अधपका पनछोछर भात रसोइये के मुँह पर फेंक दिया था। उसने जरासन्ध (कैद का रखवाला सिपाही) के गाल पर थप्पड़ जड़ते हुए कह दिया था- "एक दिन तोर पारी, एक दिन मोर पारी, आज भैया पारी-पारी।"[10]

गोरे शासक के सिपाही कैदियों को सिर्फ मारते-पीटते ही नहीं थे बल्कि उन्हें कई-कई दिनों तक भूखा-प्यासा भी रखते थे। गोरे शासकों के सिपाहियों की इस बर्बरतापूर्ण नीति का उद्घाटन करते हुए कुन्दन कहता है- "कुन्दन को कैद की चारदीवारी के भीतर की एक घटना याद आ गई। तीन दिन उसे बिना पानी के रखा गया था। चौथे दिन भी उसे पानी नहीं मिलता। वह विभीषण (कैदियों द्वारा जेल के एक पहरेदार का रखा गया नाम) था जिसने चुपके से भीगा हुआ रूमाल कोठरी के भीतर फेंक दिया था। उसे अपने मुँह में निचोड़कर उसने तीन दिनों की प्यास बुझाई थी।"[11]

अनत जी ने प्रस्तुत उपन्यास में न सिर्फ गोरे शासकों की अमानवीयता, बर्बरता, क्रूरता, शोषण एवं अन्यायपूर्ण नीति का वर्णन किया है, बल्कि इसमें उन्होंने भारतीय गिरमिटिया मजदूरों के मॉरिशस आने के कारणों पर भी प्रकाश डाला है। भूख, अकाल, महामारी से पीड़ित पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार की जनता को गोरे शासक व उनके सरदारों ने कपटपूर्ण व्यवहार करके उन्हें छला और सुखमय जीवन-यापन और मॉरिशस में सोना मिलने का सब्जबाग दिखाकर मॉरिशस ले गए। मॉरिशस पहुँचते ही भारतीय मजदूरों को वास्तविक स्थिति का भान हो गया कि उन्हें मॉरिशस में सोना बटोरने नहीं लाया गया है बल्कि उनके साथ कपटपूर्ण व्यवहार करके उन्हें गुलाम बनाया गया है। सरदारों द्वारा किए गए कपटपूर्ण व्यवहार, गरीबी व भूख से पीड़ित मजदूरों की बेबसी, मॉरिशस में सोना बटोरने की भारतीय गिरमिटिया मजदूरों की चाह और अपने देश को छोड़ने का दु:ख व पश्चाताप आदि सभी की सफल अभिव्यक्ति इस उपन्यास में हुई है- 'किसन – "उसका बाप और जतन दोनों एक साथ चले थे। आरा जिले से मॉरिशस के बन्दरगाह तक! जहाज पर सवार होने से पहले दोनों ने एक साथ गोरों के ठेकेदारों को यह कहते सुना था- चलो! मारीच के देश चलो। अकाल से पीड़ित लोग डगमगाते खड़े हो गये थे। आँखें फाड़े लोगों ने आपातकाल में पहुँचे उन मसीहों से सुना था: "यहाँ अब पार पाना मुश्किल है। यहाँ की इस बंजर पड़ी जमीन के मोह में तुम सभी कुत्ते-बिल्ली की मौत मरोगे। यहाँ कोई वर्तमान नहीं, कोई भविष्य नहीं।" ..."वहाँ कोई भूखा नहीं मर सकता। अनाज बेशुमार है वहाँ। रुपया और सोना तो हर पत्थर के नीचे है। जिन चीजों के लिए तुम लोग यहाँ तड़प रहे हो, वहाँ ये ही चीजें

तुम लोगों के लिए तड़प रहीं हैं।" लोगों की कल्पनाएँ बावली हो गई थीं। अपने-अपने ख्यालों की लकीरों से उन्होंने आकृतियाँ बनाई थीं। ...और अन्त में एक नये जीवन के लिए लोगों ने बच्चे–कच्चों की गठरियाँ बाँध ली थीं। उमंगों के भारी बोझ के साथ जहाज नए क्षितिज को चल पड़ा था। फिर तो मॉरिशस की धरती पर पाँव पड़ते ही लोगों के सपने बिखर गए। उमंगे पश्चाताप में बदल गई थीं। लोगों ने सामने अथाह सागर पर दौड़कर अपनी धरती को लौट जाना चाहा था, जब उन्हें स्थिति की जानकारी हुई थी। जब उन्होंने एक अनजान धरती पर अपने को गुलाम के रूप में पाया था। ....वे लोग अपने-आप को कोस बैठे थे। ललक में आकर लोगों की यह दशा हुई थी। लेकिन वह ललक हमारी मजबूरी थी, हमारी बेबसी थी...।"[12]

मारीच देश में भारतीय गिरमिटिया मजदूरों को सिर्फ अँग्रेज़ शासकों या सरदारों द्वारा प्रदत्त यातनाओं को ही नहीं सहना पड़ता था, बल्कि अँग्रेजों के शोषणतन्त्र में शामिल कुछ अपने लोगों द्वारा दी गयी यातनाओं को भी सहना पड़ता था। ये ऐसे लोग थे जो चन्द भौतिक सुविधाओं के चक्कर में पड़कर अपनी आत्मा को गोरे शासकों के हाथों में गिरवी रखकर स्वार्थ की रोटी सेंकने लगे थे। इस प्रवृत्ति के लोगों में रामजी सरदार, हरखू सरदार, जीतुआ सरदार व विवेक आदि के नाम लिए जा सकते हैं। प्रारम्भ में भले ही ये लोग अँग्रेजों के शोषणतन्त्र के विरोधी रहें हों, लेकिन जब इन्हें गोरे शासकों द्वारा धन, पद, जमीन आदि का प्रलोभन दिया जाने लगा, तब इनकी लोभी प्रवृत्ति इन्हें विरोध करने से रोक देती है और तब ये स्वार्थ की रोटियाँ सेंकने में मशगूल हो जाते हैं। उपन्यास में विवेक एक ऐसा ही पात्र है, जो आरम्भ में मजदूरों की दयनीय स्थिति देखकर अँग्रेजों के विरुद्ध एक आन्दोलन खड़ा करता है और जब अँग्रेज़ उसे कोठी का सरदार बनाने व काली जातियों के लोगों में सबसे अधिक वेतन देने की बात करते हैं, तब उसका सारा विद्रोह ठण्डा पड़ जाता है। सोमा द्वारा उसके आन्दोलन के बारे में पूछने पर वह कहता है- "लड़ाई तो खत्म हो गई। ...समझौता हो गया? ...मजदूरों की स्थिति का तो मुझे पता नहीं, पर मेरी अपनी स्थिति जरूर बदल गई। ...अब तक मैं मूर्ख था। दूसरों के हित के लिए अपना कम ख्याल रखता था। तुम्हें यह जानकर खुशी होगी सोमा, कि तुम्हारा यह भाई कल से कोठी का मुख्य सरदार है। मुझे जो तनख्वाह मिलेगी, वह अब तक किसी भी काली जाति को इस टापू में नहीं मिल पाई है।"[13] ये लोभी सरदार सिर्फ स्वार्थ की रोटियाँ ही नहीं

सेंकते थे बल्कि अँग्रेजों से वाहवाही लूटने के लिए अँग्रेजों से बढ़कर अपनों के प्रति जुल्म ढाते थे। अपने ही लोगों के प्रति इनमें इतनी निर्दयता, क्रूरता की भावना घर कर जाती है कि ये उन पर कोड़ा बरसाने, उन्हें कैद में डालने, बाँसों की बौछार करने या मौत के घाट उतारने से भी नहीं चूकते थे। इन धनलोलुप, अँग्रेजों के हिमायती सरदारों की निर्दयता, अमानुषिकता का एक उदाहरण दृष्टव्य है- "यही वह जीतुआ सरदार है, जिसने अपने हाथों से दो मजदूरों को रेल की पटरी से बाँधकर रेल को हरी झण्डी दिखा दी थी। ...अपने समय में इसी जीतुआ के बाप ने नए कारखाने के लिए गांव के सबसे छोटे बच्चे को कारखाने की नींव के नीचे अपने हाथों दबाया था।"[14]

'लाल पसीना' उपन्यास में अनत जी ने न सिर्फ गोरे शासकों की बर्बरतापूर्ण, अन्यायपरक नीति का वर्णन किया है बल्कि उनकी उस नीति का भी वर्णन किया है, जिसके तहत वे एक तीर से दो निशाना साधने का कार्य करते थे या यों कहें कि भौंकते हुए कुत्ते के मुँह में हड्डी डाल कर उन्हें चुप कराने का कार्य करते थे। अँग्रेज़ शासक भारतीय गिरमिटिया मजदूरों को, जो उनके अन्याय व अत्याचार के प्रति विरोध प्रकट करते, उनको या तो धन का, जमीन का या पद का लालच देकर अपने अधीन कर लेते और इन्हीं नवनियुक्त सरदारों के हाथों अपने ही जहाज़ी भाई-बन्धुओं पर कोड़े की बौछार व बाँसों की बौछार करवाते थे। उपन्यास में रामजी सरदार, हरखू सरदार, जीतुआ, विवेक इत्यादि ऐसे ही प्रवृत्ति के द्योतक हैं जो लोभवश अपनों का साथ छोड़कर अँग्रेजों के पिछलग्गू बन गये। इन लोगों की तरह किसन को भी, उसके विद्रोही स्वभाव के कारण, अँग्रेज़ शासक कोठी का सरदार बनाने की योजना बनाते हैं। जीतुआ सरदार कहता है कि- "किसन बहुत ही मेहनती लड़का है, हम उसे सरदार बनाना चाहते हैं। हमारी कोठी का वह सबसे जवान सरदार होगा।"[15] किन्तु किसन के सन्दर्भ में अँग्रेजों की 'फूट डालो राज करो' वाली योजना सफल नहीं हो पाती है, क्योंकि किसन उनकी नीति और चाल को समझता है।

प्रस्तुत उपन्यास में रघु सिंह एक ऐसे वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है जिनके लिए गोरे शासकों के अत्याचार, अन्याय, अनीति, क्रूरता, बर्बरता, अमानुषिक व्यवहार को सहना ही उनका धर्म है। दासता उन लोगों के लिए एक नियति बन गई है। वे अपनी स्थिति में सुधार लाने के लिए भी नहीं सोचते हैं। वे अपनी इस दासवृत्ति को आजीवन निभाना चाहते हैं। किसन द्वारा

अपने बाप से बार-बार प्रश्न करने पर रघु कहता है कि- "दास प्रश्न नहीं करते, आज्ञा का पालन करते हैं।" रघुसिंह की यथास्थितिवादी प्रवृत्ति का परिचय उस समय भी मिलता है, जब वह किसन को सरदारों के विरुद्ध जाने से रोकता है- "तोर ईसब हरकतवन से एक दिन हियाँ रहल मुश्किल हो जाए। तू हर दूसरे खातिर लड़ पड़ते हो। इराना मरे बिराना फिकिर। बूरबक मरे पराया फिकिर।" और जब कुन्दन कहता है कि रघु भैया, चुप रहकर भी तो यहाँ रहना आसान नहीं होता। तब रघुसिंह कुन्दन पर भी बरस पड़ता है- "देवननन् भाई, तू कहाँ ई लईक्रन के अच्छा रास्ता पर डलबे उलटे तू ही उलोगन के भड़कावत रहत हो।" ..."कुन्दन को तो ऐसा आभास हो रहा था कि ये लोग अपने हाथों को धीरे-धीरे भी पत्थरों के नीचे से निकालने की बात नहीं सोच रहे थे। हाथों के लहूलुहान हो जाने के भय से उन्होंने बिना हिले-डुले अपने हाथों को पत्थरों के नीचे पड़े रहने को छोड़ दिया था।"[16] गुलामी की दासता में जकड़े होने के कारण सिर्फ रघुसिंह ही नहीं अपनी चेतना, साहस व संघर्ष की शक्ति को खो देता है बल्कि हजारों भारतीय गिरमिटिया मजदूर अपने को बेबस, असहाय समझकर परिस्थितियों के हाथों अपने जीवन को नारकीय बनाते हैं।

प्रस्तुत उपन्यास में अनत जी ने यदि एक ओर रघुसिंह जैसे यथास्थितिवादी मजदूरों का वर्णन किया है तो दूसरी ओर किसनसिंह जैसे पात्रों के माध्यम से उन विद्रोही नवयुवकों का भी चरित्रांकन किया है जो गोरे शासकों के हर प्रकार के अत्याचार, अनाचार, अनीति, पशुता, क्रूरता व बर्बरता के प्रति आवाज उठाते हैं। गोरे शासकों के विरुद्ध आवाज उठाने के परिणामस्वरूप भले ही इन नवयुवकों को विभिन्न यातनाएँ (बाँसों की बौछार, कोड़ों की मार, कुत्तों द्वारा हमला, कैद में डाल देना या बैलों की जगह काम करना आदि) सहनी पड़ी हो किन्तु अपने अस्तित्व की रक्षा व अस्मिता को बनाये रखने के प्रति वे सचेत हैं और अपनी दयनीय, नारकीय जीवन से मुक्ति पाने के लिए सतत संघर्ष जारी रखते हैं। गोरे शासकों के राज में भारतीय गिरमिटिया मजदूरों को न तो गाने-बजाने की छूट थी, न ही पूजा-पाठ करने की, न तो देवी-देवताओं के मूर्ति स्थापना की और न ही हिन्दू रीति से शादी करने व मृतक का शव जलाने की छूट थी। इतना ही नहीं इन मजदूरों को गोरे शासकों से अपने ऊपर या अन्य साथियों के साथ किए गए पशुवत व्यवहार के कारणों को जानने की भी इजाज़त नहीं थी। लेकिन इन सब

पाबन्दियों के प्रति किसनसिंह व उसके साथी अपने-अपने स्तर पर व्यक्तिगत व सामूहिक रूप से विद्रोह करते हैं- "पहली बार जब काफी रात तक लोगों का गाना–बजाना होता रहा था तो लँगड़वा साहब ने आदमियों को भेजकर उसे रोकने का आदेश दिया था। ...धमकियों के बावजूद भी आधी रात तक महफिल जमी रही। ...किसन अपने हाथ की ढपली को इस तरह थपथपा उठता कि बैठे-ही-बैठे लोग झूमने लग जाते।" किसन सिर्फ ढिठाई के साथ गोरों को उत्तर ही नहीं देता, बल्कि उनसे अपने ऊपर या भारतीय गिरमिटिया मजदूरों पर ढाये जाने वाले विविधोन्मुखी जुल्मों के प्रति भी सवाल करता है। वह कहता है- "साहब! इस जी जान की मेहनत का हमें गलत इनाम क्यों दिया जाता है? ...गाड़ियों के बाँस हमारी पीठ पर क्यों तोड़े जाते हैं साहब?"[17]

गोरे शासकों की धमकियों के बावजूद भी नयी पीढ़ी के युवक उन धमकियों की परवाह किए बगैर एक बैठका का निर्माण करते हैं, बहरिया माई कि पूजा करते हैं, शिवालय का निर्माण करते हैं व गीता, रामायण, महाभारत, आल्हा आदि धार्मिक एवं ऐतिहासिक ग्रन्थों, लोकगीतों, श्रमगीतों आदि की पंक्तियाँ गाकर यदि एक ओर अपनी थकान मिटाते हैं और संघर्ष करने का संबल पाते हैं तो दूसरी ओर अपनी परम्परा को जीवित रखने एवं उसे नई पीढ़ी को हस्तान्तरित करने का प्रयास भी करते हैं। अपनी भारतीय परम्परा को जीवित रखने के लिए ही कुन्दन यदि बैठका में बच्चों को हिन्दी पढ़ाता है तो किसन उन बच्चों को कबड्डी व गुल्ली-डण्डा जैसे पारम्परिक खेलों से रू-ब-रू कराता है, तो सुखुवा बच्चों को बैठका में इकट्ठा करके 'रामागति' सिखाता था।

श्वेत साम्राज्यवादी शासक अपनी ताकत के दंभ में हमेशा अश्वेत गुलामों का सभी प्रकार के शारीरिक, मानसिक शोषण किया करते थे और उनसे सभी प्रकार का भेद-भाव करते हुए उन्हें नीचा दिखाने का कार्य थे। इसलिए उन्होंने ऐसे-ऐसे नियम बना रखे थे जो असमानतापूर्ण, अमानवीय, अनैतिक एवं अनुचित थे। गोरे शासकों के राज में भारतीय गिरमिटिया मजदूरों को साहबों के पालतू कुत्तों के नहाने के स्थानों पर जाने और नदी में उस स्थान पर नहाने की भी मनाही थी- "नदी के उस विशेष ठौर पर जहाँ साहब के कुत्ते को नहलाया जाता था, वहाँ आज भी किसी आदमी को नहाने की इजाज़त नहीं मिलती। एक बार खुद किसन को वहाँ नहाते पकड़ा गया था और उसके लिए उसे अपनी नंगी पीठ पर दस कोड़े सहने पड़े थे। ...उसी दिन उसने नया गीत बनाया था। ...तीन ही चार दिन में बस्ती के कई लोग उसे गुनगुनाने लगे थे। उस गीत के

लिए भी उसे चन्द कोड़े और खाने पड़े थे। ...सरदार ने सभी मजदूरों को चेतावनी दी थी कि आइन्दा किसी ने उस गीत को गाने की कोशिश की तो उसे नौकरी और बस्ती से निकाल दिया जाएगा।" वह गीत इस प्रकार है - "ओ रे मूसे लंगड़वा के राज में / कुतवन के बड़ा भाग बा / दुम हिलावल से ओकर त बनल बात बा / मूसे रेमों के राज में / गोर चाटे के मोल बा / आदमी बा कुत्ता / कुत्ता सरदार बा / ओ रे ...रे मूसे।"[18]

प्रस्तुत उपन्यास में अनत जी ने गोरे शासकों की उस पक्षपातपूर्ण रवैया का भी रेखांकन किया है जिसके तहत वे मालगासी सरदारों व भारतीय गिरमिटिया मजदूरों के साथ भेद-भाव किया करते थे। भारतीय गिरमिटिया मजदूरों के साथ यह भेद-भाव कई स्तरों पर किया जाता था। यथा- श्रम, आय, रंग व स्वतंत्रता आदि के आधार पर। गोरे शासकों के शासनकाल में भारतीय मजदूरों को सबसे कठोर कार्य करना पड़ता था जो कम परिश्रम वाले काम थे उनको मालगासी करते थे। इस संबन्ध में किसन कहता है — "ईख के कारखाने में ...वहाँ के सभी अच्छे काम मालगासी करते थे। वहाँ जो भारतीय मजदूर थे, वे तो हाड़-माँस के कल की तरह लगाए गए थे। कोल्हू के बैल और उनमें कोई अन्तर था ही नहीं। ...वहाँ के सभी अच्छे कामों में क्रियोल क्यों थे? इसके उत्तर में उसे (किसन से) यही कहा जाता क्योंकि वे लोग भारतीय नहीं। ...सभी योग्यता होने पर भी भारतीय लोगों को कोई भी ऐसा काम नहीं दिया जाता, जो बेहतर था और जिस पर गोरों और मालगासियों का एकाधिकार-सा था। सबसे अच्छे काम गोरों के लिए होते थे, कुछ बेहतर काम उनके होते जो न तो गोरे थे और न ही भारतीय। अपने आपको सांत्वना देने के लिए अगर भारतीयों के पास कुछ था तो वह यह कि काम, काम होता है।"[19] भारतीय मजदूरों को उनके श्रम का पूरा पारिश्रमिक भी नहीं दिया जाता था। कभी-कभी तो पूरे महीने का पारिश्रमिक ही जब्त कर लिया जाता था। जो पारिश्रमिक दिया भी जाता वह मालगासी मजदूरों की तुलना में कम होता था। इतना ही नहीं इन मजदूरों को वहाँ पर अपनी धार्मिक मान्यताओं, रीति-रिवाजों, पर्वों-त्योहारों व पूजा-पाठ आदि करने की भी छूट नहीं थी और न ही पारम्परिक ढंग से विवाह व दाह-संस्कार आदि करने की छूट थी। इस सन्दर्भ में रघुसिंह कहता है- "बड़े ही साहस के साथ देश की पहली शादी का आयोजन उसी ने करवाया था। इस द्वीप में हिन्दू रीति-रिवाज से हुआ सन्तू और सोमा का विवाह पहला विवाह माना जाता है। कुलियों को विवाह

करने का अधिकार ही कहाँ था। खुद रघुसिंह ने तो कतार में घूँघट में खड़ी कोसिला के पाँव की केवल पातली देखकर उसे अपनी पत्नी मान लिया था।"[20]

गोरे शासक भारतीय गिरमिटिया मजदूरों के साथ न सिर्फ पशुवत व्यवहार करते थे बल्कि उनकी धार्मिक आस्थाओं और मान्यताओं पर भी बन्दिश लगाते थे। वे यदि कभी किसी मजदूर के मुँह से रामायण, महाभारत, गीता, हनुमान चालीसा व आल्हा आदि की पंक्तियाँ गाते-गुनगुनाते सुन लेते थे तो मजदूरों को इसके लिए भी कड़ी-से-कड़ी सजा देते थे। वह सजा चाहे कोड़े की बौछार हो या कैद की सजा या बैलों की जगह काम करवाकर। सोमा का पिता रामायणी था। रामायण पाठ करने के कारण ही उसे तीन महीने की कैद की सजा भुगतनी पड़ी थी। इतना ही नहीं यदि किसी मजदूर के घर की दीवारों पर कोई धार्मिक चित्र बना होता था या कोई वाक्य लिखा होता था, तो गोरे शासक और उनके सरदारों द्वारा उस दीवार को गिरवा दिया जाता था या उसे गोबर से लिपवा दिया जाता था। गोरे शासक अपने को भगवान का पुत्र मानते थे और भारतीयों के देवी-देवताओं को काले–कलूटे जैसे शब्दों से अपमानित करते थे। वे मजदूरों को बलात् ईसाई धर्म अपनाने हेतु प्रेरित करते थे। जो ऐसा नहीं करता था उसे वे पागल घोषित कर देते थे। उपन्यास में नालेताम्बी एक ऐसे ही वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है जिसको गोरे शासक भारतीय देवी–देवताओं में आस्था रखने के कारण पागल घोषित कर देते हैं- "कोठी का पादरी भी उससे यही कहा था कि तुम पागल हो ताम्बी, भगवान के पुत्र की स्तुति न करके तुम काले-कलूटे देवी-देवताओं की पूजा करते हो, तुम पत्थरों की मूर्तियाँ पूजनेवाले सभी पागल हो।"[21]

अनत जी ने उन मजदूरों का भी वर्णन किया है, जिन्होंने गोरे शासकों के भयवश या लोभवश धर्म परिवर्तन कर लिया। ऐसे लोगों में सोन्द्रों और नालेताम्बी के अतिरिक्त सैकड़ों लोग थे जो उन्हीं की तरह ईसाई बनते चले जा रहे थे- "उस पादरी ने बड़े गर्व के साथ मदन को यह बताया था कि तीन महीने के भीतर वह तीन सौ भारतीयों को सही रास्ते पर लाने में सफल हुआ था। वह सही रास्ता सलीब का रास्ता था- परमात्मा के पुत्र का रास्ता था। उसने मदन को यह भी बताया था कि शिवेन सीमों बनकर मजदूर से सरदार बन गया था। ...वह फेहरिश्त बहुत लम्बी थी।"[22] इस प्रकार गोरे शासक भय दिखाकर, प्रलोभन देकर भारतीय मजदूरों को धर्म परिवर्तन करने हेतु प्रेरित करते थे। मजदूरों का बलात् धर्मान्तरण कराने की इस प्रक्रिया में सिर्फ

गोरे शासक ही नहीं शामिल थे बल्कि इसमें कुछ अपने लोग भी शामिल थे जो गोरों के हिमायती बन बैठे थे- "कुन्दन भैया ... मुझसे बार-बार यही कहा जाता कि मैं अपने गले की उस ताबीज को उतार फेंकूँ जिसके भीतर हनुमान जी का चित्र था। मैं इनकार करता रहा, मेरी पीठ पर कोड़े बरसते रहे। मुझे गिरजाघर के आँगन में खड़ा करके घंटे को जोर से बजाया जाता ...फिर मुझसे कहा जाता कि मैं घुटने टेककर असली परमात्मा का नाम लूँ। ... मैंने सलीब वाली चेन लेने से इनकार किया ... मेरे गले से मेरी माँ की निशानी उस ताबीज को नोच लिया गया। ... तुम पतियाओगे नहीं कि उनके साथ हमारे अपने लोग भी मिले हुए थे।"[23]

प्रस्तुत उपन्यास में अनत जी ने न सिर्फ गोरे शासकों के भीषण अत्याचार का वर्णन किया है बल्कि इसके साथ-साथ उन्होंने भारतीय गिरमिटिया मजदूरों की उस संगठन शक्ति का भी चित्रण किया है जिसके बल-बूते वे गोरे शासकों को अपनी शर्तें मनवाने पर मजबूर कर देते हैं। गोरों को अपनी संगठन शक्ति का एहसास दिलाना वे आवश्यक समझते थे। इसीलिए तो किसन कहता है- "हजारों की संख्या में होते हुए भी अगर हम शक्तिशाली नहीं बन सके, इस देश को फल-फूल देकर भी अगर हम आज-ही-की स्थिति में रहना मान लें तो बस वे हाथ हमारे ऊपर उठते रहने से कभी नहीं थमेंगे ... हमें अपनी ताकत को होशियारी से बढ़ाना है ... अवसर आने पर सभी कोठियों के लोग एक साथ खड़े होंगे। तब कहीं जाकर लोगों को हमारी शक्ति का भान होगा और हमारे ऊपर उठने वाले ये हाथ दोबारा उठने की हिम्मत नहीं कर सकेंगे।"[24] अपनी संगठन शक्ति के बल पर ही सात बस्तियों के मजदूर एक साथ ही हड़ताल करते हैं और इस हड़ताल को तब तक जारी रखते हैं जब तक कि गोरे शासक उनकी माँगों को पूरा करने का वचन नहीं दे देते हैं- "सात बस्तियों ने एक साथ कदम उठाए। खेतों में श्मशान जैसा सन्नाटा छाया रहा। पीपल के नीचे लछमनसिंह ने अपने सभी आदमियों के बीच कहा कि छिलल बकरी भागे न पाए। ... किसन के बस्ती के लोग नदी के पास इकट्ठे हुए थे। पहले वाक्य कुन्दन के थे, "आज का समय हम सबन के लिए जामवन्त है। जिस तरह जामवन्त ने हनुमान जी को उनकी शक्ति की जानकारी दी थी, उसी तरह आज का समय हम सबन को, हमारी शक्ति को ललकार रहा है। सात बस्तियों की ताकत है। सात बस्तियों की ताकत है- हमारे साथ ... दूसरे दिन भी खेतों में मक्खियाँ नहीं भिनकी। ... सिपाही और सरदार तीन बार आए और चले गये। तीसरे दिन भी

खेतों में सूनापन रहा। ... यह पहली बार हुआ था। उस भव्य कोठी के बरामदे में मालिकों और प्रतिनिधियों (सातों बस्तियों के प्रतिनिधि) की बैठक हुई। ... रेमों साहब ने बात शुरू की- ठीक है हम सुनें कि तुम लोगों की माँगे क्या हैं?"[25] सभी प्रतिनिधियों की ओर से केवल किसन बात करता है। वह मजदूरों के जायज हकों की बात करते हुए उन्हें इंसान समझने की माँग करता है- "हमारी पहली माँग यह है कि हमें आदमी समझा जाए। बैल नहीं। ... हमने प्रण कर लिया है कि भूखे मर जाएँगे, पर बाँसों की मार खाने को तैयार नहीं होंगे।" दूसरी माँग– "हम बस्तियों के भीतर कैदियों की तरह नहीं रह सकते। हमें उस घिराबट से बाहर आने-जाने की स्वतन्त्रता हो।" तीसरी माँग– "हम स्वतंत्र रूप से अपनी पंचायत और बैठक लगा सकें। पूजा-पाठ कर सके।" चौथी माँग– "हम अनाज और डॉक्टर से वंचित नहीं रहना चाहते। ... हमारी माँगे अगर पूरी नहीं हुई तो कल सात की जगह सत्तर बस्तियाँ यहाँ खड़ी दिखाई पड़ेगी।" पाँचवीं माँग– "हमारी बहनों और बहू-बेटियों का आदर होना चाहिए। पिछले महीने एक बस्ती में चार लड़कियों ने आत्महत्या कर ली थी। सभी की अन्तिम माँग यह है कि हमारे बच्चों को पढ़ने–लिखने का अवसर दिया जाए।"[26] उपर्युक्त माँगों से स्पष्ट है कि किस प्रकार गोरे शासकों द्वारा भारतीय गिरमिटिया मजदूरों को उनकी मूलभूत अनिवार्य आवश्यकताओं से वंचित रखा जाता और उन पर अनेकों प्रकार के जुल्म ढाये जाते थे। और इनका प्रतिकार मूलत: मजदूरों को भी इंसान मानने और उन्हें इज्जत के साथ जीवन–यापन का अधिकार देने एवं उसके लिए अनिवार्य आवश्यकताओं की माँग और उसकी पूर्ति हेतु था।

प्रस्तुत उपन्यास में न सिर्फ गोरे शासकों की बर्बरतापूर्ण नीति एवं भारतीय गिरमिटिया मजदूरों के संघर्ष शक्ति को दर्शाया गया है बल्कि इसके साथ-साथ गोरे शासकों द्वारा गिरमिटिया मजदूरों की स्त्रियों, बहन-बेटियों एवं बहुओं पर किए गए अत्याचार को भी दर्शाया गया है। इसके साथ-ही-साथ अनत जी ने कानून व्यवस्था के पक्षपातपूर्ण रवैये का भी यथार्थपरक अंकन किया है। कानून व्यवस्था चाहे किसी भी देश की क्यों न हो, वह सदैव सत्ता पक्ष या शोषक वर्ग का समर्थन करती है। इतना ही नहीं गोरे शासकों द्वारा भारतीय गिरमिटिया मजदूरों का बलात्

धर्म परिवर्तन भी कराया जाता था, इसका भी यथार्थपरक वर्णन प्रस्तुत उपन्यास में किया गया है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि प्रस्तुत उपन्यास के माध्यम से अनत जी ने औपनिवेशिक शासनकाल में मॉरिशस के आप्रवासी भारतीय गिरमिटिया मजदूरों की दु:ख-दर्द भरी जिन्दगी का जीवन्त दस्तावेज प्रस्तुत किया है। साथ ही साथ औपनिवेशिक सत्ता की गुलामी से मुक्ति पाने हेतु भारतीय गिरमिटिया मजदूरों के संगठन व संघर्ष एवं मॉरिशस को आजाद कराने में उनकी अहम् भूमिका को भी उद्घाटित करने का सार्थक प्रयास किया है। आप्रवासी हिंदी साहित्य के मर्मज्ञ डॉ. कमल किशोर गोयनका के शब्दों में कहें तो "लाल पसीना' उपन्यास दासता से मुक्ति का महाकाव्य है।' और यह वाक्य इस उपन्यास के एतिहासिक महत्व को रेखांकित करता है।

संदर्भ-सूची :

1. अभिमन्यु अनत, लाल पसीना, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण- 2010, पृष्ठ- फ्लैप से
2. कमल किशोर गोयनका, अभिमन्यु अनत: एक बातचीत, ज्ञानभारती प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण- 1985, पृष्ठ- 82
3. संपा. रामशरण जोशी, भारतीय डायस्पोरा: विविध आयाम, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण-2014, पृष्ठ-191
4. अभिमन्यु अनत, लाल पसीना, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण- 2010, पृष्ठ- 100
5. वही, पृष्ठ- 60
6. वही, पृष्ठ- 24- 25
7. वही, पृष्ठ- 91
8. वही, पृष्ठ- 32
9. वही, पृष्ठ- 22

10. वही, पृष्ठ- 34
11. वही, पृष्ठ- 66
12. वही, पृष्ठ- 68-69
13. वही, पृष्ठ- 264
14. वही, पृष्ठ-111
15. वही, पृष्ठ-111
16. वही, पृष्ठ- 43-44
17. वही, पृष्ठ- 52-53
18. वही, पृष्ठ- 53-54
19. वही, पृष्ठ-101
20. वही, पृष्ठ- 50-51
21. वही, पृष्ठ- 257
22. वही, पृष्ठ- 311
23. वही, पृष्ठ- 31
24. वही, पृष्ठ- 75
25. वही, पृष्ठ-148-149
26. वही, पृष्ठ-149-150

Mizoram University Journal of Humanities & Social Sciences
(A National Refereed Bi-Annual Journal) Vol III Issue 2, December 2017 ISSN: 2395-7352

'Lal Pasina': The Long Struggle of Indentured Indian Labourers

Ms. Aradhana Shukla*
Prof. Sanjay Kumar**

Abstract

Abhimanyu Unnuth, a prominent writer who has written extensively in Hindi, is not only a well-known creative writer in Mauritius but represents the whole Hindi diaspora. Mr. Unnuth has givien expression in his own land of Mauritius to various problems that arise in his society and history. He has written around thirty two fictions by now. The ones like 'Lal Pasina', 'Gandhi Ji Bole The' and 'Aur Pasina Bahata Raha' are works that relate to the life of non-resident diasporan. To say the least, in Mauritius dark-skin indentured Indian labourers had been subjected to endless exploitations for almost a hundred and forty years by the European white people. Abhimanyu Unnuth has placed in view a sad but moving history of writing those living conditions of indentured Indian labourers and their struggle for sustainability, rights, social upliftment and freedom.

*Ms. Aradhana Shukla, Ph.D. Research Scholar, Dept. of Hindi, Mizoram University, Aizawl, Mizoram
Email: shukla.aradhana2015@gmail.com
**Prof. Sanjay Kumar, Dept. of Hindi, Mizoram University, Aizawl, Mizoram
Email: sanjaykumarmzu@gmail.com